

शुष्क क्षेत्रों हेतु उपयुक्त कलिंगडा

भरत चौधरी, राजेश पंचाल, ललिता सैनी, नितेश प्रजापति और **नयन बाँटवा**

कलिंगडा कम वर्षा और रेगिस्तानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फसल है। इसे अपेक्षाकृत कम पानी की आवश्यकता होती है, इसकी खेती की लागत भी कम होती है और यह प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अच्छी तरह उग सकती है। पिछले कुछ वर्षों से इसे वर्षा ऋतु के साथ-साथ गर्मी के मौसम में भी उगाया जा रहा है। किसान इसे बाजरा, अरंडी, ग्वार, मूंग और ज्वार जैसी फसलों के साथ मिश्रित फसल के रूप में भी लेते हैं। इसकी खेती मुख्य रूप से गुजरात और राजस्थान के शुष्क एवं कम वर्षा वाले क्षेत्रों में की जाती है। गुजरात में बनासकांठा, वाव थराद, पाटन और कच्छ तथा राजस्थान में बाड़मेर, बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर, पोखरण, नोखा, चूरू, सीकर और बालोतरा क्षेत्रों में इसकी खेती प्रचलित है। कम लागत, सीमित जल आवश्यकता और प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों में उत्पादन की क्षमता के कारण कलिंगडा किसानों के लिए आय का एक उपयोगी विकल्प बन सकता है। जलवायु परिवर्तन और जल की बढ़ती कमी के वर्तमान परिदृश्य में ऐसी स्थानीय एवं कम पानी वाली फसलों का महत्व और भी बढ़ जाता है।

गुजरात और राजस्थान में कलिंगडा लंबे समय से स्थानीय खानपान एवं संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। विभिन्न क्षेत्रों में इसे अलग-अलग स्थानीय नामों से जाना जाता है और पारंपरिक व्यंजनों में इसका उपयोग किया जाता है।

गुजरात में इसे कलिंगडा, राजस्थान में मटेरा या कलिंगड तथा मारवाड़ क्षेत्र में मटेरा कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे सब्जी तरबूज या जंगली तरबूज कहा जाता है। इसके विभिन्न स्थानीय नाम संबंधित क्षेत्रों की भाषा, संस्कृति और खानपान की परंपराओं को दर्शाते हैं।

फसल सुधार केंद्र, सरदार कृषिनगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, सरदार कृषिनगर



कलिंगडा फल की गिरी

कलिंगडा की सफल खेती के लिए उपयुक्त मौसम और भूमि का चयन महत्वपूर्ण है।

मौसम: शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों की जलवायु कलिंगडा की खेती के लिए अनुकूल होती है। रात का हल्का ठंडा तापमान फलों की वृद्धि के लिए लाभकारी माना जाता है। अधिक आर्द्रता, कोहरा और लगातार वर्षा से रोगों का प्रकोप बढ़ सकता है। फसल की अच्छी वृद्धि के लिए पर्याप्त धूप आवश्यक है। यह फसल 25 से 40 डिग्री सेल्सियस तापमान में अच्छी तरह बढ़ती है।

भूमि: कलिंगडा की खेती के लिए रेतीली और दोमट मृदा उपयुक्त होती है।

विशेष

कलिंगडा भारत की एक पारंपरिक एवं स्थानीय सब्जी फसल है। इसका वैज्ञानिक नाम सिट्रुलस लैनाटस है और यह कुकुरबिटेसी कुल से संबंधित है। इसकी खेती विशेष रूप से शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। कलिंगडा एक बेलदार पौधा है, जिसकी बेलें जमीन पर फैलती हैं। इसमें पीले रंग के फूल लगते हैं तथा इसके फल गोल या अंडाकार और देखने में छोटे तरबूज जैसे होते हैं। इसके फल स्वाद में मीठे नहीं होते, इसलिए इनका उपयोग फल के बजाय मुख्य रूप से सब्जी के रूप में किया जाता है।



खेत में फैली कलिंगडा की बेल एवं फल

भूमि में जल निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि जलभराव से पौधों की जड़ों और बेलों को नुकसान पहुंच सकता है। भारी काली और अधिक चिकनी मृदा इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं मानी जाती। मृदा का पीएच मान 6.0 से 7.5 के बीच उपयुक्त रहता है।

कलिंगडा की खेती पारंपरिक और उन्नत दोनों कृषि पद्धतियों से की जा सकती है। उचित कृषि तकनीकों को अपनाकर फसल की उपज और गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है।

खेत की तैयारी: खेत की अच्छी तरह जुताई कर मृदा को भुरभुरी और समतल कर लेना चाहिए। अंतिम जुताई के समय प्रति हैक्टर 20 से 25 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद मृदा में मिला देनी चाहिए। वर्षा आधारित क्षेत्रों में ऊंची क्यारियां बनाना लाभकारी रहता है, जिससे खेत में पानी जमा न हो। शुष्क क्षेत्रों में समतल भूमि पर भी कलिंगडा की खेती की जा सकती है।

बुआई का समय और किस्में: कलिंगडा की बुआई मुख्य रूप से वर्षा और गर्मी के मौसम में की जाती है। खरीफ मौसम में इसकी बुआई जून-जुलाई में पर्याप्त वर्षा होने पर तथा गर्मी के मौसम में फरवरी के अंत में की जाती है। उपयुक्त समय पर बुआई करने से फसल की अच्छी वृद्धि और अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

गुजरात में कलिंगडा की खेती के लिए सरदार कृषिनगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित उन्नत एवं अधिक उपज देने वाली किस्मों गुजरात कलिंगडा-1, गुजरात कलिंगडा-2 और गुजरात कलिंगडा-3 की सिफारिश की जाती है।

सिंचाई: कलिंगडा मुख्य रूप से वर्षा आधारित फसल है, इसलिए सामान्यत: वर्षा ऋतु में अलग से सिंचाई की आवश्यकता कम पड़ती है। हालांकि, वर्षा की कमी होने पर तथा सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने की स्थिति में फूल आने और फल बनने की अवस्था पर आवश्यकता के अनुसार एक-दो सिंचाइयां देने से उत्पादन में सुधार हो सकता है।

गर्मी के मौसम में बुआई करने पर बुआई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। इसके बाद फसल की अवस्था, मृदा की नमी और मौसम के अनुसार सिंचाई करें। फूल आने और फल बनने की अवस्था में पर्याप्त नमी बनाए रखना आवश्यक है।

टपक सिंचाई प्रणाली अपनाने से पानी की बचत होती है और पौधों को आवश्यकतानुसार नमी मिलती रहती है। कलिंगडा कम पानी में उगने वाली फसल है, इसलिए अधिक सिंचाई और जलभराव से बचना चाहिए। फल पकने की अवस्था में सिंचाई की मात्रा कम रखने से बीज की गुणवत्ता बेहतर हो सकती है।



पलवार के साथ कलिंगडा उत्पादन

उर्वरक एवं पोषण: कलिंगडा की फसल के लिए अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद महत्वपूर्ण पोषण स्रोत है। यदि मृदा की उर्वरता कम हो, तो आवश्यकतानुसार सीमित मात्रा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश का प्रयोग किया जा सकता है। मिश्रित फसल प्रणाली में सामान्यत: अलग से उर्वरक देने की आवश्यकता कम पड़ती है।

एकल फसल के रूप में कलिंगडा की खेती करने पर प्रति हैक्टर 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस देने की सिफारिश की जाती है। इसमें 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस बुआई के समय तथा शेष 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन को

फसल की बढ़वार के अनुसार 30 से 45 दिनों के बीच दिया जा सकता है।

खरपतवार प्रबंधन: छिड़काव विधि से बोई गई फसल में बुआई के 20 से 40 दिनों के दौरान आवश्यकतानुसार हाथ से निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। पंक्ति विधि से बोई गई फसल में लगभग 25 दिनों बाद निराई-गुड़ाई करना उपयोगी रहता है। खेत को प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार मुक्त रखने से फसल की वृद्धि और उपज बेहतर होती है।

फसल सुरक्षा: सामान्यत: कलिंगडा में कीट एवं रोगों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम देखा जाता है। फिर भी चूषक कीटों का प्रकोप दिखाई देने पर उनकी पहचान के अनुसार अनुशंसित कीटनाशी का उचित मात्रा में समय पर छिड़काव करना चाहिए। रोगों और कीटों की नियमित निगरानी भी आवश्यक है।



उन्नत तकनीक से भरपूर उपज

बुआई विधि और बीज दर

कलिंगडा के बीजों को बुआई से पहले उपयुक्त फफूंदनाशी तथा जैविक उपचार से उपचारित करने पर अंकुरण और प्रारंभिक वृद्धि बेहतर होती है। इसकी बुआई मुख्य रूप से छिड़काव विधि, पंक्ति विधि और मिश्रित फसल प्रणाली से की जाती है। उपयुक्त विधि का चयन क्षेत्र की मृदा, वर्षा, जल उपलब्धता और खेती की पद्धति के अनुसार किया जाना चाहिए।

छिड़काव विधि: यह विधि मुख्य रूप से वर्षा ऋतु में अपनाई जाती है। इसमें बीजों को खेत में समान रूप से छिड़ककर हल्की जुताई या उपयुक्त कृषि यंत्र की सहायता से मृदा में मिला दिया जाता है। इस विधि से बुआई के लिए लगभग 2 से 3 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है।

पंक्ति विधि: इस विधि में दो पंक्तियों के बीच 2 से 3 मीटर तथा दो पौधों के बीच लगभग 1 मीटर की दूरी रखी जाती है। इससे पौधों को पर्याप्त स्थान मिलता है और खरपतवार नियंत्रण तथा अन्य कृषि कार्य आसानी से किए जा सकते हैं। इस विधि में लगभग 0.5 से 1.0 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। गर्मी के मौसम में सब्जी के रूप में खेती करने के लिए पंक्ति से पंक्ति और पौधे से पौधे की दूरी लगभग 1 मीटर रखने की सिफारिश की जाती है।

मिश्रित फसल प्रणाली: कलिंगडा को बाजरा, ज्वार, लोबिया, कपास और दलहनी फसलों के साथ मिश्रित फसल के रूप में उगाया जा सकता है। यह प्रणाली विशेष रूप से शुष्क क्षेत्रों और वर्षा आधारित खेती के लिए उपयोगी मानी जाती है।



कलिंगडा के बीज

तुड़ाई एवं कटाई: बीज उत्पादन के लिए कलिंगडा की फसल सामान्यत: 75 से 80 दिनों में तैयार हो जाती है। पूर्ण रूप से पके फलों को तोड़कर उनसे बीज अलग किए जाते हैं। इसके बाद बीजों को अच्छी तरह सुखाकर भंडारण या बाजार में बिक्री के लिए तैयार किया जाता है।

सब्जी के रूप में उगाई गई फसल में पहली तुड़ाई लगभग 50 दिनों बाद शुरू हो सकती है। कोमल फलों को उपयुक्त आकार प्राप्त होने पर तोड़ लिया जाता है। बाजार की मांग के अनुसार नियमित अंतराल पर लगभग 12 से 15 तुड़ाई प्राप्त की जा सकती हैं।

उत्पादन: कलिंगडा के बीजों की औसत उपज लगभग 500 से 800 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तक प्राप्त की जा सकती है। सब्जी के रूप में इसकी खेती करने पर उपज लगभग 100 क्विंटल प्रति हैक्टर तक हो सकती है। उन्नत तकनीक भरपूर उपज

उपयोग: कलिंगडा का उपयोग मुख्य रूप से सब्जी के रूप में किया जाता है। गुजरात और राजस्थान के कई क्षेत्रों में इसकी सूखी सब्जी भी बनाई जाती है। इसके बीजों को भूनकर खाया जाता है।

बीजों से गिरी निकाली जाती है, जिसे स्थानीय रूप से मगत्सरी कहा जाता है। इसका उपयोग सब्जियों की तरी बनाने तथा मिठाइयों की सजावट में भी किया जाता है।

फल से निकले गूदे का उपयोग पशु आहार के रूप में किया जा सकता है। फसल अवशेषों का उपयोग भी पशु चारे के रूप में किया जाता है।